The Banyan Tree Journal
(An Open Access Peer-reviewed Multidisciplinary Journal)
ISSN:
No. 1, June 2025 : 97-101

महाभारत में क्षेमतत्त्व

रुचि मिश्रा*
डॉ. प्रमा द्विवेदी**

सारांशिका

विश्वसाहित्य में सबसे विशालतम व अद्वितीय श्रेय को प्राप्त महाभारत में एक लाख श्लोक व अट्ठारह सर्ग हैं। अनुष्टुप् छन्द में रचित महाभारत के विषय में स्वयं उसके रचनाकार महर्षि व्यास कहते हैं **'यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्'** जो इसमें है वही सम्पूर्ण राष्ट्र में है जो इसमें नही हैं वह अन्यत्र भी अप्राप्त है। इस उक्ति को चरितार्थ करने वाला महाभारत के विषय वस्तु का मुख्य प्रयोजन 'क्षेम' अर्थात् कल्याण है। जो मानव जीवन के कल्याण व चतुर्दिक विकास के लिए अत्यन्त उपयोगी है। जैसे दया सबसे महान धर्म है, क्षमा सबसे बड़ी शक्ति है। परमात्मा का तत्त्वज्ञान सबसे बड़ा ज्ञान है और सत्य व्यवहार सबसे बड़ा व्रत जो फलरूप में मानव कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता है।

बीजशब्द – विशालतम, अद्वितीय, क्षेम, क्षमा, सत्य, दया, धर्म, चतुर्दिक विकास।

प्रस्तावना

शतसाहस्री संहिता व पञ्चमदेव के नाम से सर्वविदित महाभारत केवल भारतवर्ष में ही नहीं अपितु विश्ववाङ्मय का सबसे बृहत् एवं अद्वितीय ग्रन्थ है। इसके प्रणेता महर्षि 'पराशर' एवं 'सत्यवती' के कीर्तिमान पुत्र 'कृष्ण द्वैपायन' हैं, जो लोक में वेदव्यास के नाम से प्रसिद्ध हैं। महर्षि व्यास का नाम अन्वर्थसंज्ञक है शरीर का श्याम वर्ण होने से 'कृष्ण' द्वीप में जन्म होने से 'द्वैपायन', वेदों का विभाजन कर्ता होने के कारण वेदव्यास, यमुना नदी के बदरीयुक्त द्वीप में जन्म होने से ये 'बादरायण' नाम से भी जाने जाते हैं। महर्षि व्यास विरचित महाभारत प्रमुख इतिहास ग्रन्थ भी है।

द्वीपे जातोयतो बालस्तेन द्वैपायनो भवत्
वेद शाखा विभजाद्वेदव्यासः प्रकीर्तितः।।[1]

महत्त्वाद् भारवत्वाच्च महाभारतमुच्यते।[2]

इतिहासोत्तमे यस्मिन्नर्पिता बुद्धिरुत्तमा।[3]

हृदानामुदधिः श्रेष्ठो गौर्वरिष्ठा चतुष्पदाम्।
यथैतानीतिहासानां तथा भारतमुच्यते।[4]

महाभारत एक उपजीव्य महाकाव्य है जिसकी उपजीव्यता स्वयं व्यास ने उद्घोषित किया है-

'सर्वेषां कविमुख्यानामुपजीव्यो भविष्यति'[5]

---

* शोधच्छात्रा, जगत तारन गर्ल्स डिग्री कॉलेज, प्रयागराज

** सहायक प्राध्यापक, जगत तारन गर्ल्स डिग्री कॉलेज, प्रयागराज

पञ्चमवेद के नाम से लोकविश्रुत महाभारत इतना महान् व विशिष्ट है इसकी तुलना के लिए एक ओर इसको और दूसरी ओर साङ्गवेद, धर्मशास्त्र तथा अठारह पुराणों आदि को रखा जाता है-

अष्टादशपुराणानि धर्मशास्त्राणि सर्वशः
वेदाः साङ्गास्तथैकत्र भारतं चैकतः स्थितम्[6]

इस विशालतम महाकाव्य का विकास तीन चरणों में हुआ। प्रथम चरण में 'जय' नाम से, द्वितीय चरण 'भारत' तथा तृतीय चरण 'महाभारत' के रूप में हुआ। 'जय' में 'अट्ठासी' सौ श्लोक, भारत में 'चौबीस हजार' श्लोक व महाभारत में एक लाख श्लोक होने से इसको शतसाहस्री संहिता कहा गया।

अष्टौ श्लोकसहस्राणि अष्टौ श्लोकशतानि च।[7]

चतुर्विंशतिसाहस्रीं चक्रे भारत-संहिता[8]

एकं शतसहस्रं तु मयोक्तं वै निबोधयत[9]

महाभारत के सम्पूर्ण प्रबन्धयोजना में अट्ठारह संख्या का विशिष्ट महत्त्व है। महाभारत का युद्ध अट्ठारह दिनों तक चला, इसका प्राणतत्त्व श्रीमद्भगवतद्गीता में अट्ठारह अध्याय व महाभारत में अट्ठारह ही पर्व भी हैं- आदिपर्व, सभापर्व, वनपर्व, विराटपर्व, उद्योगपर्व, भीष्मपर्व, द्रोणपर्व, कर्णपर्व, शल्यपर्व, सौप्तिकपर्व, स्त्रीपर्व, शान्तिपर्व, अनुशासनपर्व, आश्वमेधिकपर्व, आश्रमवासिक पर्व, मौसल पर्व, महाप्रस्थानिकपर्व व स्वर्गारोहरण।

भारतीय आत्मा के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास रखने वालों की आस्था का एकमात्र केन्द्र महाभारत में निहित मान्यताएँ शाश्वत व सार्वदेशिक है। तात्पर्य यह है कि महाभारत केवल अपने सयम के जीवनमूल्यों और घटनाओं को ही नहीं बताता, अपितु आज के जीवन मूल्यों के लिए भी उतना ही प्रासङ्गिक है जितना पहले था। 'यदि हास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्विचत्' जो इसमें नहीं है वो अन्यत्र भी अप्राप्त है इस उक्ति को चरितार्थ करने वाला महाभारत में निहित विषयवस्तु का मुख्य प्रयोजन क्षेम अर्थात कल्याण अर्थात् मानव कल्याण के मार्ग को प्रशस्त करना है। यद्यपि महाभारत में एक ही परिवार के दो पक्षों का युद्ध वर्णन मिलता है, परन्तु उसको सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो उस युद्ध के पीछे का मुख्य कारण मानव कल्याण व उनका जीवन मूल्य है। अन्ततः 18 दिन के इस भीषण युद्ध का जब परिणाम आया तो उसमें अधर्म पर धर्म की विजय पताका फहरी। मानव कल्याण के पुरुषार्थ चतुष्टय को विषयवस्तु बनाने वाले महाभारत में यद्यपि अनेकानेक धर्म, राजधर्म, वर्णधर्म आदि हैं उन्हीं विभिन्न धर्मों में क्षेमतत्त्व अर्थात् कल्याणकारी तत्त्व निहित हैं जो मनुष्य के इहलोक के जीवन और परलोक के मार्ग को सुगम बनाता है। मानव जीवन कैसे कल्याण को प्राप्त करे और उसका चतुर्दिक विकास कैसे हो, इसका वर्णन महाभारत में कथोपकथन, संवाद, उपदेश, स्वधर्म एवं कर्तव्यनिष्ठता के अनिवार्यता आदि के द्वारा बताया गया है-

यदि भूल से भी कोई अनुचित कार्य कर बैठे तो वैसा काम फिर नहीं करना चाहिए। झूठ बोलना छोड़ दे, निःस्वार्थ भाव से दूसरों का भला करें। काम, क्रोध तथा द्वेष के कारण धर्माचरण को न छोड़े इससे प्रतिफलित मानव कल्याण होता है।

मृषा वादं परिहरेत् कुर्यात् प्रियमयाचितः।
न च कामान्न संरम्भान्न द्वेषाद् धर्ममुत्सृजेत्।।[10]

जो मनुष्य अनुचित कार्य करके हृदय से पश्चात्ताप करता है वह पाप से छूट जाता है। मैं ऐसा अनुचित कार्य फिर नही करुंगा, यह दृढ़ निश्चय कर लेने पर वह भविष्य में होने वाले बुरे कार्यों से बच जाता है।[11] यह शरीर नदी है। पाँच इन्द्रियाँ इस नदी का जल है और काम तथा लोभ जैसे मगरमच्छ इसमें भरे पड़े हैं इसिलए धैर्य की नाव पर बैठकर इस नदी के दुर्गम स्थानों अर्थात् जन्म आदि दुःखों को पार करना चाहिए। यह भी मानव कल्याण का उपाय है-

कामलोभग्रहाकीर्णां पञ्चेन्द्रियजलां नदीम्।
नावं धृतिमयीं कृत्त्वा जन्मदुर्गाणि सन्तर।।[12]

मानव के चतुर्दिक विकास व कल्याण के लिए आवश्यक तत्त्व है कि वह तप को क्रोध से, धर्म को द्वेष से, विद्या को मान और अपमान से तथा अपने को आलस्य से सदा बचाना चाहिए।

नित्यं क्रोधात्तपो रक्षेद्धर्मं रक्षेच्च मत्सरात्।
विद्यां मानापमानाभ्यामात्मानं तु प्रमादतः।।[13]

धर्म का विधिपूर्वक अनुष्ठान करना चाहिए धर्म ही है जो मनुष्य के इहलोक और परलोक को भी कल्याणकारी बनाता है। उससे बढ़कर दूसरा कोई श्रेय का उत्तम साधन नही है। सभी आश्रमों के लोगों को अपने-अपने धर्म में स्थित रहकर स्वधर्म का पालन करना चाहिए। मनुष्य नेत्र, मन, वाणी और क्रिया के द्वारा चार प्रकार के कर्म करता है और जैसा कर्म करता है वैसा ही उसका फल प्राप्त करता है। मनुष्य अपने कर्मानुसार ही कभी केवल सुख कभी दुःख-सुख दोनों एक साथ प्राप्त करता है। पुण्य या पाप कोई भी कर्म क्यों न हो फल भोगे बिना उसका नाश नही होता हैं अतएव मनुष्य को सदैव वही कर्म करना चाहिए जो अपने अनुकूल व दूसरे के भी अनुकूल हो, अपने को भी सुख प्राप्त हो दूसरे लोगों को भी सुख प्राप्त हो।

निरन्तरं च मिश्रं च लभते कर्म पार्थिव।
कल्याणं यदि वा पापं न तु नाशोऽस्य विद्यते।।[14]

इन्द्रियसंयम क्षमा, धैर्य, तेज, संतोष, सत्यभाषण लज्जा, अहिंसा दुर्व्यसन का अभाव तथा दक्षता ये सब मनुष्य को सुख प्रदान करने वालें तथा कल्याण के साधक हैं-

दमः क्षमा धृतिस्तेजः संतोषः सत्यवादिता।
ह्रीरहिंसाव्यसनिता दाक्ष्यं चेति सुखावहाः।[15]

धर्म का पालन करते हुए ही जो धन प्राप्त होता है, वही सच्चा धन है। जो अधर्म से प्राप्त होता है, वह धन तो धिक्कार देने योग्य है। संसार में धन की इच्छा से शाश्वतधर्म का त्याग कभी नही करना चाहिये-

येऽर्था धर्मेण ते सत्या येऽधर्मेण धिगस्तुतान्
धर्मं वै शाश्वतं लोके न जह्याद्धनकाङ्क्षया।।[16]

जो संकट आने से पहले ही अपनी रक्षा का उपाय कर लेता है तथा जिसे ठीक समय पर संकट से रक्षा करने का उपाय सूझ जाता हैं ऐसे मनुष्य ही सुख से अपनी उन्नति करते हैं किन्तु हर कार्य में अनावश्यक विलम्ब करने वाला अर्थात् दीर्घसूत्री मनुष्य नष्ट हो जाता है। सदैव गुरुजनों का आदर, वृद्ध जनों की सेवा और शास्त्रों को सुनना ये तीन कल्याण करने के निश्चित साधन हैं–

गुरुपूजा च सततं वृद्धानां पर्युपासनम्।
श्रवणं चैव शास्त्राणां कूटस्थं श्रेय उच्यते।।[17]

जो व्यक्ति अपने धर्म, अर्थ, और काम इन तीनों को पूरा करना चाहता हैं उसे राजा ब्राह्मण और स्त्री से खाली हाथ नहीं मिलना चाहिये।[18] मम अर्थात् 'यह मेरा है' इन दो अक्षरों की भावना मन में बनाये रखने से मनुष्य मौत के मुख में रहता है किन्तु 'न मम' यह मेरा नही है इन तीन अक्षरों की भावना मन में रखने से मनुष्य शाश्वत नित्य ब्रह्म के सम्पर्क में रहता है। यह मानव क्षेम अर्थात् कल्याण का सर्वोत्तम एवं सरल सहज उपाय है-

द्वयक्षरस्तु भवेन्मृत्युस्त्र्यक्षरं ब्रह्मं शाश्वतम्।
ममेति च भवेन्मृत्युर्न ममेति च शाश्वतम्।।[19]

जिनके आचर-विचार, विद्या और कर्म श्रेष्ठ होते हैं। मनुष्य को उन्हीं की संगति करनी चाहिए, क्योंकि जैसा आचरण श्रेष्ठजन करते हैं वैसा ही आचरण अन्यजन भी करते हैं। जो दुरात्मा लोक-मर्यादाओं को नष्ट करते हैं वे नरक में कष्ट भोगते हैं। धर्म की वृद्धि से ही समाज उन्नति को प्राप्त होता है, महाभारत में कहा गया है-

येषां त्रीण्यवदातानि विद्या योनिश्च कर्म च।
ते सेव्यास्तैः समास्या हि शास्त्रेभ्योऽपि गरीयसी।।[20]

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।।[21]

सम्यक् अध्ययन, न्यायोचित युद्ध, पुण्यकर्म और अच्छी तरह की गई तपस्या के अन्त में सुख बढ़ता है। मनुष्य बुद्धि से भय को दूर करता है। तपस्या से महत् पद पाता हैं। गुरुजनों की सेवा से ज्ञान और योगाभ्यास से शान्ति प्राप्त करता है जिससे मनुष्य का चतुर्दिक विकास एवं कल्याण होता है। वस्तुओं का स्पर्श योगाभ्यास, स्वाध्याय, उद्यमशीलता, सरलता एवं सज्जनों की संगति भी मानव प्रतिफलित कल्याण करते हैं।–

मङ्गलालम्भनं योगः श्रुतमुत्थानमार्जवम्।
भूतिमेतानि कुर्वन्ति सतां चाभीक्ष्णदर्शनम्।।[22]

निष्कर्ष

इस प्रकार महाभारत में मानव के आचरण एवं व्यवहार से सम्बन्धित अनेक लोककल्याणात्मक वर्णन प्राप्त है। जो मानव कल्याण की अवधारणा एवं चतुर्दिक विकास में अनेक प्रकार से उपयोगी है। यदि मनुष्य इन उपायों को अपने जीवन के आचरण में अंशमात्र भी उतार ले तो उसका कल्याण निश्चित है क्योंकि महाभारत केवल अपने समय के जीवन मूल्यों व घटनाओं को ही नहीं बताता अपितु वर्तमान जीवनमूल्यों के लिए भी उतना ही प्रासङ्गिक है जितना पहले था। इसकी महत्ता इस श्लोक से ज्ञापित होती है-

यो गोशतं कनकशृङ्गमयं ददाति
विप्राय वेदविदुषे सुबहुश्रुताय।
पुण्यां च भारतकथां शृणुयाच्च नित्यं
तुल्यं फलं भवति तस्य च तस्य चैव।।

अर्थात् सौ गौओं के सींग में सोना मढ़ाकर वेदवेत्ता एवं बहुज्ञ ब्राह्मणों को जो गौएँ दान देता है और जो महाभारत कथा का प्रतिदिन श्रवणमात्र करता है इन दोनों में से प्रत्येक को बराबर ही फल मिलता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. देवीभागवत 2.3.41
2. महाभारत आदपर्व 1.274
3. महाभारत आदिपर्व 2- 39
4. महाभारत आदिपर्व 1.265-66
5. महाभारत आदिपर्व 1.92
6. संस्कृत वाङ्गमय का वृहद् इतिहास, पृ. 429
7. महाभारत आदिपर्व 1.81
8. महाभारत आदिपर्व 1.102
9. महाभारत आदिपर्व 1.109
10. महाभारत वनपर्व 207.42
11. महाभारत वनपर्व 207.51
12. महाभारत वनपर्व 207.72
13. महाभारत वनपर्व 213.29
14. महाभारत शान्तिपर्व 290.17
15. महाभारत शान्तिपर्व 290.20
16. महाभारत शान्तिपर्व 292.19
17. महाभारत शान्तिपर्व 287.2
18. महाभारत द्रोणपर्व 175.43
19. महाभारत शान्तिपर्व 13.4
20. महाभारत वनपर्व 1.27
21. महाभारत भीष्म 27.21
22. महाभारत उद्योगपर्व 39-56
23. महाभारत माहात्म्य